इकाई 14 नागार्जुन के काव्य में संवेदना के रूप

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 संवेदना क्या है?
14.3 संवेदना के विविध रूप
  14.3.1 प्रकृति संसार
  14.3.2 मनुष्य और पशु
  14.3.3 दैनन्दिन जीवन
  14.3.4 राजनीति
  14.3.5 व्यंग्य की धार
  14.3.6 जीवन के कोमल पक्ष : प्रेम एवं सौंदर्य
14.4 संवेदना की जटिलता : कुछ और पक्ष
14.5 सारांश

14.0 उद्देश्य

इस इकाई से पूर्व आप छायावादी कवि पंत, महादेवी और राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-धारा के प्रतिनिधि कवि 'दिनकर' का अध्ययन कर चुके हैं। यहाँ आप प्रगतिशील काव्य-धारा के वरिष्ठ कवि नागार्जुन के काव्य का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- नागार्जुन के काव्य के विभिन्न रूपों को जान सकेंगे,
- संवेदना के वास्तविक स्वरूप और उसकी प्रकृति से परिचित हो सकेंगे,
- नागार्जुन के काव्य में संवेदना के विभिन्न रूपों का अध्ययन कर सकेंगे, और
- इस बात से वाकिफ़ हो सकेंगे कि किस प्रकार जीवन अपने विविध रूपों में, अपने क्षुद्रतम अंश से लेकर विराट रूपों तक नागार्जुन के काव्य का हिस्सा बन कर उनकी संवेदना का आलंबन बनता है।

14.1 प्रस्तावना

नागार्जुन को प्रगतिशील काव्यधारा का आधार कवि माना जाता है। नागार्जुन ने जीवन को उसके विविध रूपों में, जटिल संघर्षों को, राजनीतिक विकृतियों को, मजदूर आंदोलनों को, किसान-जीवन के सामान्य दुख-सुख को पहचानने और अभिव्यक्त करने का वृहत्तर सर्जनात्मक उत्तरदायित्व अपने कंधों पर उठाया है। जिस प्रकार उनकी काव्य संरचना और कथ्य के स्तर पर वैविध्य है, वैसा ही वैविध्यमय उनका जीवन भी रहा है। नागार्जुन की बात करते ही उनकी कविताएँ 'अकाल और उसके बाद', 'बादल को घिरते देखा है' तथा 'कालिदास सच सच बतलाना' हठात ध्यान में आ जाती हैं। लेकिन इन तीनों कविताओं की विषयवस्तु अलग-अलग है, इनका शिल्प भी एक दूसरे से भिन्न है और तीनों की संवेदना के भी अलग-अलग रंग हैं। नागार्जुन के काव्य में संवेदना के इन्हीं भिन्न-भिन्न रूपों के माध्यम से हम उनके काव्य का अध्ययन इस इकाई में करेंगे। किसी भी वस्तु, भाव और स्थिति के हृदय पर पड़े प्रभाव की प्रतिक्रिया ही संवेदना कहलाती है। नागार्जुन का काव्य संसार वैविध्यमय होने के साथ-साथ बहुत व्यापक एवं विराट हैं। इसमें प्रकृति, मनुष्य, पशु, राजनीतिक-सामाजिक जीवन, जीवन के मधुर एवं कोमल पक्ष, व्यंग्य की तीखी धार, दैनन्दिन जीवन की गतिविधियाँ सब शामिल हैं। नागार्जुन का यह वैविध्यमय संसार उनकी काव्य संवेदना का किस प्रकार हिस्सा बनता है, आइये इसे देखें।

14.2 संवेदना क्या है?

अभी हमने कहा था कि किसी भी वस्तु, भाव या स्थिति का हृदय पर जो प्रभाव पड़ता है और उसकी जो प्रतिक्रिया होती है, उसे ही संवेदना कहते हैं। इस बात को दूसरे ढंग से भी समझा जा सकता है। आप ज़रा अपने आसपास नज़र डालिए। यह दुनिया कितनी बड़ी है और कितनी भरी-पूरी है। इसके

इतने सारे रंग और रूप हैं। इतने सारे पदार्थ हैं, इतनी वस्तुएँ हैं। प्रत्येक वस्तु प्रत्येक घटना हम पर किसी-न-किसी रूप में असर डालती है, जैसे पानी में कंकड़ फेंकने से तरंग उठती है वैसे ही हम जब कुछ देखते-सुनते हैं या जब हमें कुछ होता है तो हम भी प्रतिक्रिया करते हैं। हमारा हृदय प्रभावित होता है और तब उसी प्रभाव के अनुरूप भाव उत्पन्न होता है। वस्तुओं का हृदय पर पड़ने वाला यही प्रभाव और उससे उत्पन्न प्रतिक्रिया ही संवेदना कहलाती है। आदिकवि वाल्मिकि का वह प्रसिद्ध प्रसंग तो आप जानते ही हैं, जब एक क्रौंच पक्षी की हत्या से आहत कवि के मुँह से अनायास छंद फूट पड़ा था। यही संवेदना है। अंग्रेज़ी भाषा के कवि शेक्सपीयर की प्रसिद्ध उक्ति है - ओ आइ हैव सफरड् विद दोज हूम आइ सा सफर (मैं उनके दुख से दुखी हुआ जिन्हें मैंने दुख भोगते देखा)। एक कवि अत्यंत संवेदनशील होता है अर्थात् अधिक-से-अधिक वस्तुओं, स्थितियों, प्रसंगों का उस पर प्रभाव पड़ता है और वह उन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। जो कवि जितना बड़ा होगा वह उतना ही अधिक संवेदनशील होगा यानी उसकी दुनिया भी बहुत बड़ी होगी और इसीलिए उसके संवेदना के रूप भी बहुत होंगे। एक बड़ा कवि प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक जीव से तादात्म्य अनुभव करता है - 'मैंने उन सबके साथ दुख भोगा जिन्हें दुख भोगते देखा। नागार्जुन ने अपनी एक कविता 'प्रतिबद्ध हूँ' में इसे बहुत बढ़िया ढंग से व्यक्त किया है :

संबद्ध हूँ, जी हाँ संबद्ध हूँ
सचर-अचर सृष्टि से
शीत से, ताप से, धूप से, हिमपात से .....
.....
आबद्ध हूँ, जी हाँ, आबद्ध हूँ
स्वजन-परिजन के प्यार की डोर में
प्रियजन के पलकों की कोर में .....
तीसरी चौथी पीढ़ियों के दंतुरित शिशु-सुलभ हास में .....

आप इस पूरी कविता को पढ़िए तो पता चलेगा कि जीवन के कितने सारे पक्ष कवि को संवेदित करते हैं। जितनी तरह के पक्ष हैं, जितनी तरह के प्रसंग हैं उतनी तरह की संवेदनाएँ भी हैं।

14.3 संवदेना के विविध रूप

संवेदना के भिन्न-भिन्न रूपों पर बात करने से पहले सबसे पहली बात जो हम हमेशा ध्यान में रखें वह यह कि कोई भी बात हवा में नहीं हो सकती। कहने का मतलब यह कि जब हम किसी कवि के बारे में बात कर रहे हैं तो उसकी कविता को सामने रखना पड़ेगा। कविता के एक-एक शब्द को पढ़ना, समझना पड़ेगा। लेकिन यहाँ कुछ और बातें भी ध्यान में रखना ज़रूरी है। जैसे कि आप जानते ही होंगे कि नागार्जुन बिहार प्रांत के मिथिला-क्षेत्र के रहने वाले हैं। उनकी मातृभाषा मैथिली है। उन्होंने मैथिली में भी अनेक कविताएँ लिखी हैं। साहित्य अकादमी पुरस्कार उन्हें मैथिली कविता संग्रह 'पत्रहीन नग्न गाछ' पर ही मिला है। संस्कृत पर भी उनका सहज अधिकार है। उन्होंने संस्कृत में भी कविताएँ लिखी हैं और 'युगधारा' की भूमिका के अनुसार 'कवित्व का आरंभिक उन्मेष संस्कृत के माध्यम से हुआ'। नागार्जुन को मिथिला के ग्राम-जीवन का गहरा आत्मीय अनुभव तो है ही, सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप के जीवन का भी विस्तृत अनुभव है। उनका मैथिली उपनाम 'यात्री' है जो अकारण नहीं है। नागार्जुन लगातार यात्रा करते रहे हैं। सुदूर श्रीलंका से लेकर तिब्बत तक, काश्मीर से काठियावाड़ तक। इस प्रकार यह सम्पूर्ण भारतीय भूभाग उनकी कविता में है - मिथिला के 'रूचिर भू-भाग' से लेकर 'मुलुंड' और 'वितस्ता', 'अमल धवल गिरि के शिखरों' से लेकर 'मानसरोवर के स्वर्णिम कमलों' तक। एक बात और..... नागार्जुन तो प्रगतिवादी हैं, मार्क्सवादी, किसान-सभा के आंदोलनों से लेकर सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन और अनेक अन्य आंदोलनों में उन्होंने भाग लिया है, लाठियाँ खायी हैं, जेल गये हैं और इन सबकी छाप भी उनकी कविता पर भीतर तक है। साथ-साथ यह भी याद रखना ज़रूरी है कि नागार्जुन पहले बौद्ध धर्म में दीक्षित होकर वैद्यनाथ मिश्र से नागार्जुन बने, फिर गृहस्थ बनकर मार्क्सवादी भी बन गए। इस प्रकार वे दो दर्शन-परंपराओं, भारतीय बौद्ध दर्शन तथा पाश्चात्य मार्क्सवादी दर्शन से घनिष्ठ रूप से संबद्ध रहे। तो यह है नागार्जुन का जीवन-पटल। आप पूछ सकते हैं, क्या संवेदना के रूपों को समझने के लिए किसी कवि के जीवन के बारे में जानकारी ज़रूरी है! बिना जाने भी तो हम पढ़ सकते हैं। सो तो ठीक है, लेकिन कुछ बातें, कुछ मोटी-मोटी बातें अगर हम कवि के बारे में जान सकें तो समझने में सुविधा ज़रूर होगी। जैसे यही बात कि नागार्जुन ने इतनी सारी राजनीतिक कविताएँ क्यों लिखीं? स्पष्ट है कि वह एक सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता भी रहे, इसीलिए। नागार्जुन के जीवन का

जो विस्तार है वह उनकी कविता में भी मिलता है। उनकी कविता जीवन-संकुल, गहन और भरी-पूरी है। इसलिए उनकी चेतना का स्वरूप भी अत्यंत व्यापक है, जिसे हम कुछ शीर्षकों में विभक्त कर आसानी से समझ सकते हैं।

14.3.1 प्रकृति संसार

कहा जाता है कि कोई भी व्यक्ति, एक बच्चा भी, सबसे पहला चित्र प्रकृति का बनाता है और सबसे पहली कविता भी प्रकृति पर ही लिखता है। पता नहीं यह बात कहाँ तक सच है। वैसे आप चाहें तो कुछ कवियों को चुन लें और उनको पढ़ कर पता लगाएँ कि क्या यह बात सही है। आप चाहें तो बच्चों के बनाए चित्रों को भी देख सकते हैं। सबके बारे में यह बात सच हो या न हो, लेकिन नागार्जुन के बारे में इतना तय है कि उनकी कविता का एक बहुत बड़ा भाग प्रकृति-निर्मित तथा उनकी कविताओं का एक अपरिहार्य संवेग प्रकृतिजन्य है। प्रकृति के असंख्य रूपों ने नागार्जुन को तीव्रता से संवेदित किया है। उनके पहले कविता-संग्रह 'युगधारा' में एक कविता है :

'रजनीगंधा'

तुम खिलो रात की रानी
हो म्लान भले यह जीवन और जवानी
तुम खिलो रात की रानी।'
प्रहरी-परिवेष्टित इस बंदीशाला में
मैं सड़ूँ सही, पर ताज़ी रहे कहानी
तुम खिलो रात की रानी!
यह प्रहरी के बूटों की कर्कश टापें
रह-रह कर बहुधा नींद तोड़ जाती हैं
आँखें खुलती तो बस झुंझला उठता हूँ ....
ये हृदय-हीन! ये नर-पिशाच! ये कुत्ते!
इतने में अनुपम सुवास से सुरभित
शीतल समीर का हल्का झोंका आता
सारे अभाव-अभियोग भूल जाता हूँ
या आकुल मन इतना प्रमुदित हो जाता
जय हो जय हो कल्याणी!

यह जेल और यह सेल-नियंत्रित प्राणी
इस आँगन में उस ओर तुम्हारा खिलना
यह भीनी-भीनी सारी रात महकना
दिन हुआ कि बस हो गई मौन तुम सजनी
आई निशा कि फिर खिली कौन तुम सजनी-
रजनीगंधा बनकर भू पर उतरी हो?
अभिशापित देवसुता या कि परी हो!
पुलकित होते तन-मन, जगती है वाणी
जय जय जय जय कल्याणी!

यहाँ रात की रानी की सुगंध ने कवि को व्याकुल कर दिया है। रजनीगंधा की सुगंध इस बंदी जीवन का प्रतिवाद तथा विकल्प सा है। आप इस कविता को ध्यान से पढ़ें, और सोचें :

(क) कविता का मूल संवेदना-स्रोत क्या है?
(ख) क्या कविता केवल रात की रानी का वर्णन भर करती है?
(ग) अन्य कौन से प्रसंग कविता में हैं?
(घ) प्रकृति का कौन-सा रूप कविता में व्यक्त हुआ है?
(ड.) क्या इसे केवल प्रकृति-प्रेम की कविता कहा जा सकता है?
(च) किस तरह से यह कविता पूर्ववर्त्ती छायावादी कविता से अलग अथवा एक जैसी है?

अब देखिए, कविता का स्रोत मुख्यतः रात की रानी की सुगंध में है। रात की रानी की सुगंध ने ही कविता के वाचक को व्यग्र किया है - पहली पंक्ति 'तुम खिलो रात की रानी' से लेकर अंतिम बंद की 'जय जय जय जय कल्याणी' तक। लेकिन यह कविता रात की रानी का वर्णन मात्र नहीं है। बल्कि

वर्णन तो बहुत कम है। मुख्यतः सुगंध के प्रभाव का वर्णन है - 'पुलकित होते तन-मन, जगती है वाणी।' इसके अलावा कविता केवल रात की रानी पर ठहर नहीं जाती। उसमें परिवेश का उल्लेख है, वाचक के निजी जीवन का भी, राजनीतिक स्थिति का भी। 'यह प्रहरी परिवेष्टित बंदीशाला' है, 'जहाँ मैं सडूँ सही', 'जहाँ ये हृदयहीन ये नरपिशाच ये कुत्ते' शासन कर रहे हैं जहाँ 'सेल-नियंत्रित प्राणी' तक 'रजनीगंधा के अनुपम सुवास से सुरभित शीतल समीर का हल्का झोंका आता' है। और इस झोंके के प्रभाव से वाचक अपने 'सारे अभाव-अभियोग भूल जाता है'। इस तरह प्रकृति मनुष्य की सहयोगी है, मुक्तिदाता। तभी तो - 'हो म्लान भले यह जीवन और जवानी तुम खिलो रात की रानी'। यह केवल प्रकृति-प्रेम की कविता नहीं है। एक ही कविता में प्रकृति-प्रेम भी है और व्यवस्था के प्रति घृणा भी। यह पूववर्ती कविता में शायद नहीं मिलता। आप खुद सोचें और बताएँ।

मतलब यह कि नागार्जुन की यह कविता जिसकी मूल संवेदना प्रकृति में है लेकिन वास्तव में वहीं तक सीमित नहीं है। इसमें अन्य कई संवेदनाएँ आकर जुड़ती हैं और इस तरह एक जटिलता की रचना होती है। निजी जीवन का संताप, व्यवस्था के प्रति रोष, अन्याय का विरोध, आततायियों से घृणा, मुक्ति का अहसास - यह कविता पूरे जीवन पर एक टिप्पणी है। लेकिन संवेदना का आरंभिक बिंदु निश्चय ही रजनीगंधा है जो जीवट और जीवन का और जो कुछ अर्थवान है उसका प्रतीक बन जाती है।

नागार्जुन की काव्य-संवेदना का एक मुख्य अवलम्ब प्रकृति है। प्रकृति की अनेकानेक छटाएँ। यहाँ तालमखान है, अमराइयाँ हैं, मौलसिरी के फूल हैं, चाँदनी है, नीम की टहनियाँ, कटहल, सिंके हुए भुट्टे, फसल का सोनिया समंदर और बरफ और सबसे अधिक तो बादल। प्रकृति का कोई भी अंश नागार्जुन को सहज ही संवेदित कर देता है। 'गंध-रूप शब्द स्पर्श सब साथ-साथ इस भू पर' - नागार्जुन कहते हैं (बहुत दिनों के बाद)। प्रकृति उनके सभी रंध्रों को मानो खोल देती है।

अब यदि आप एक सूची बनाएँ उन कविताओं की जो 'बादल' पर हैं तो आप पाएँगे कि बादलों ने और बरसात की विभिन्न मुद्राओं ने नागार्जुन को सर्वाधिक प्रभावित किया है। कह सकते हैं कि नागार्जुन की प्रिय ऋतु बरसात है जैसे निराला का वसंत। आप एक कार्य यह भी कर सकते हैं कि निराला, प्रसाद, मुक्तिबोध, अज्ञेय और शमशेर को लें और देखें कि इन कवियों की प्रिय ऋतु कौन-सी है। अथवा प्रकृति का कौन-सा पक्ष इनकी कविताओं में सर्वाधिक बार आता है। ऐसा करके आप इन कवियों को या किसी भी कवि को ज्यादा अच्छी तरह समझ सकेंगे।

तो नागार्जुन में प्रकृति, विषयक सर्वाधिक कविताएँ बादलों पर हैं। 'बादल को घिरते देखा है' से लेकर 'आषाढ़ वदि षष्ठी की सघन काली घन घटा' और 'धिन धिन धा मेघ बजे' से लेकर 'घन कुरंग' तक। क्या आप बता सकते हैं कि नागार्जुन में इतने बादल क्यों हैं? क्या सिर्फ इसलिए कि वे सुंदर और सम्मोहक हैं अथवा कोई और भी कारण होगा कहीं? आप पता लगाइये। और तब आप देखेंगे कि नागार्जुन में प्रकृति और मनुष्य प्रायः साथ-साथ आते हैं जैसा कि हमने 'रजनीगंधा' कविता में देखा। फिर यह देखें कि प्रकृति का कौन-सा रूप नागार्जुन में अधिक प्रबल है। जैसे, शमशेर में प्रकृति का कोमल पक्ष, अक्सर शाम, मुक्तिबोध में प्रकृति का रौद्र पक्ष, अक्सर रात, केदारनाथ अग्रवाल में प्रकृति का प्रसन्न पक्ष, अक्सर दिन। नागार्जुन को प्रकृति का उदात्त और प्रसन्न पक्ष सर्वाधिक स्पंदित करता है। अब आप यह कविता पढ़िए और सोचिए कि इस कविता की मूल संवेदना क्या है :

'पछाड़ दिया मेरे आस्तिक ने'

शुरू-शुरू कातिक में
निशा शेष ओस की बूँदियों से लदी है
अगहनी धान की दुद्धी मंजरियाँ
पाकर परस प्रभाती किरणों का
मुखर हो उठेगा इनका अभिराम रूप ....
टहलने निकला हूँ 'परमान' के किनारे-किनारे
बढ़ता जा रहा हूँ खेत की मेंड़ों पर से, आगे
वापस मिला है अपना वह बचपन
कई युगों के बाद आज
करेगा मेरा स्वागत
शरद् का बाल रवि...
चमकता रहेगा घड़ी-आधी घड़ी
पूर्वांचल प्रवाही 'परमान' की

द्रुत-विलंबित लहरों पर
और मेरे ये अनावृत चरण युगल
करते रहेंगे चहल-क़दमी
सैकत पुलिन पर

छोड़ते जाएँगे सादी-हलकी छाप....
और फिर आएगी, हँसी मुझे अपने आप पर
उतर पड़ूँगा तत्क्षण पंकिल कछार में
बुलाएँगे अपनी ओर भारी खुरों के निशान
झुक जाएगा यह मस्तक अनायास
दुधारू भैंसों की याद में....

यह लो, दूर कहीं शीशम की झुरमुट से
उड़ता आया है नीलकण्ठ
गुज़र जाएगा ऊपर-ही-ऊपर
कहाँ जाकर बैठेगा?
इधर पीछे जवान पाकड़ की फुनगी पर?
या कि, उस बूढ़े पीपल की बदरंग डाल पर?
या कि, उड़ता ही जाएगा
पहुँचेगा विष्णुपुर के बीचोंबीच
मंदिर की अँगनई में मौलसिरी की
सघन पत्तियों वाली टहनियों की ओट में
हो जाएगा अदृश्य, करेगा वहीं आराम!
जाने भी दो,
आओ तुम मेरे साथ रत्नेश्वर
देखेंगे आज जी भरकर
उगते सूरज का अरूण-अरूण पूर्ण-बिम्ब
जाने कब से नहीं देखा था शिशु भास्कर
आओ रत्नेश्वर, कृतार्थ हों हमारे नेत्र!
देखना भई, जल्दी न करना
लौटना तो है ही
मगर यह कहाँ दिखता है रोज़-रोज़
सोते ही बिता देता हूँ शत-शत प्रभात
छूट-सा गया है जनपदों का स्पर्श
(हाय रे आंचलिक कथाकार!)
आज मगर उगते सूरज को
देर तक देखेंगे, जी भरकर देखेंगे
करेंगे अर्पित बहते जल का अर्घ।

अब प्रश्न है :

(क) कविता की मूल संवेदना क्या है?
(ख) क्या यह आस्तिकता के पक्ष में है?
(ग) वाचक को आस्तिकता की लांछना का भय क्यों होता है?
(घ) इस कविता के अंत में 'डेविएशन' शब्द क्यों आता है?

इस कविता के मूल में वह संवेदना है जो 'उगतें सूरज का अरूण पूर्ण-बिंब' देखकर उत्पन्न होती है जो किसी भी भारतीय को विह्वल कर देता है और यह श्लोक अनायास कंठ से फूट पड़ता है- 'ओ नमो भगवते भुवन भास्कराय....'। यह विह्वलता, संवेदना की यह अतिशयता ही आस्तिकता का प्रथम चरण है। लेकिन यह कविता वास्तव में प्रकृति के वैभव के सम्मुख सहज नत भाव की अभिव्यक्ति है। सम्पूर्ण समर्पण। 'डेविएशन' मार्क्सवादी शब्दावली का एक रूढ़ भाव है जो वैचारिक भ्रांति को इंगित करता है। क्योंकि आस्तिकता एक मार्क्सवादी के लिए भ्रांति ही तो है, एक 'डेविएशन'। लेकिन यहाँ कोई विचलन या डेविएशन नहीं है, यहाँ तो प्रकृति के एक उदात्त क्षण, सूर्योदय से साक्षात्कार की कथा है,

केवल सौंदर्य के प्रति समर्पण की कथा। नागार्जुन में हमें संवेदना का वो स्तर भी मिलता है जो सरल दिखता हुआ भी बहुधा जटिल होता है। एक संवेदना-तंतु वास्तव में अनेक तंतुओं का जाल होता है।

अब आप यह कविता देखिए जिसमें एक 'प्रोफेसर' हमारे 'कवि' पर संवेदना के ठस होने का आरोप लगाता है - 'आपकी गंध - चेतना ठस तो नहीं हुई?'

'नथुने फुला फुला के'

राहे चलते-चलते
यक-ब-यक बाँह पकड़ ली
खुद भी खड़े रहे
मुझे भी रोक लिया
और बोलेः
क्या कुछ खास-सी महसूस होती है?
मैं चौंकाः
क्या सचमुच कोई ख़ासियत मालूम देती है!
फिर हमारे प्राध्यापक मित्र
भरपूर साँस खींचकर कहने लगेः
'यहाँ, मुलुण्ड में इत्र का कारखाना लगा है
मराठा व्यवसायी एक कोई केलकर साहब ने
सौरभ-द्रव्यों का अपना अभिनव उत्पादन-केंद्र
आरंभ किया है यहाँ मुलुण्ड में
प्रतिदिन, सन्ध्याकाल
पवन देव की अनुकम्पा से
ईद-गिर्द बीसियों किलोमीटर
हो उठते हैं मुअत्तर...
यह सुरभित सान्ध्य समीर
हमारे मुलुण्ड की बहुत बड़ी ख़ासियत है....'

'आपकी गंध-चेतना ठस तो नहीं हुई?
अभी तो सत्तर के न हुए होंगे आप –'
फिर से प्राध्यापक मित्र ने
अपने तईं भरपूर साँस खींची
नथने फुला-फुलाके
वो मुअत्तर हवा भर ली अंदर।

अब आप बताइये :

(क) इस कविता में वास्तव में किसकी गंध चेतना ठस है?
(ख) इस कविता की मूल संवेदना क्या है?
(ग) 'रजनीगंधा' और 'नथुने फुला फुला के ....' किस तरह से भिन्न अथवा समान है?

हम दुहरा लें कि अभी तक हमने संवेदना क्या है इसकी चर्चा की और पाया कि वस्तुओं-व्यक्तियों-प्रसंगों के प्रति हमारी जो प्रतिक्रिया होती है वही संवेदना है। हमने नागार्जुन की प्रकृति-विषयक कविताओं में व्यक्त संवेदना की चर्चा की और पाया कि वे इकहरी नहीं बल्कि बेहद जटिल हैं।

14.3.2 मनुष्य और पशु

प्रायः प्रकृति-चित्रण का अर्थ होता है पेड़-पौधों, हवा, बादल, पहाड़-समुद्र, सूर्य-चंद्रमा तारों का चित्रण। लेकिन पशु भी इसी प्रकृति के अंग हैं, यह बात अक्सर भुला दी जाती है। जब से मनुष्य है तभी से पशु हैं उसके साथ, और जिस तरह पेड़-पौधों, पहाड़, समुद्र ने मनुष्य की चेतना को प्रभावित किया है वैसे ही जानवरों ने भी। विश्व साहित्य की कुछ दुर्लभ कृतियाँ मनुष्य और पशु के संबंधों के बारे में हैं, जैसे टॉल्सटॉय की मशहूर कहानी 'यार्डस्टिक' जो एक घोड़े की और उसके माध्यम से मनुष्य की कहानी है। क्या आप उस प्रसिद्ध हिंदी कहानी का नाम बता सकते हैं जिसमें एक कुत्ता भी, मनुष्य की तरह ही एक महत्वपूर्ण पात्र है और लेखक की संवेदना का संवाहक?

नागार्जुन की कविता में जानवर भी संवेदना जगाते हैं और नागार्जुन ने बहुत मार्मिकता से उनका अंकन किया है। प्रायः हर जगह जानवर और आदमी का जीवन सम्मिलित रूप से आता है जैसे प्रसिद्ध कविता 'अकाल और उसके बाद' में या 'नेवला' में। लेकिन हम उस कविता को लें जिसके बिना नागार्जुन के काव्य के सार को समझना कठिन है।

'पैने दाँतों वाली'

धूप में पसरकर लेटी है
मोटी-तगड़ी, अधेड़, मादा सूअर....

जमना-किनारे
मखमली दूबों पर
पूस की गुनगुनी धूप में
पसरकर लेटी है
यह भी तो मादरे-हिंद की बेटी है
भूरे-भूरे बारह थनों वाली!

लेकिन अभी इस वक्त
छौनों को पिला रही है दूध
मन-मिजाज ठीक है
कर रही है आराम
अखरती नहीं है भरे-पूरे थनों की खींच-तान
दुधमुँहे छौनों की रग-रग में
मचल रही है आखिर माँ की ही तो जान!

जमना-किनारे
मखमली दूबों पर
पसर कर लेटी है
यह भी तो मादरे-हिंद की बेटी है!
पैने दाँतों वाली....

आपने यह कविता पढ़ी। अब आप इन प्रश्नों पर विचार करें :

(क) कविता किसके बारे में है?
(ख) 'यह भी तो मादरे-हिंद की बेटी है' का क्या अर्थ?
(ग) क्या यह कविता केवल एक जानवर की कविता है?

अगर आप इस कविता को ध्यान से पढ़ें तो पाएँगे कि नागार्जुन काव्य का सार तत्व इसमें व्यंजित है। उनकी कविता का सम्पूर्ण सौंदर्य-शास्त्र यहाँ मिलता है। अर्थात् जीवन का क्षुद्रतम अंश भी कविता के लिए पवित्र है तथा जीवन का प्रत्येक कण कवि की संवेदना को जगाने में सक्षम। एक मादा सूअर जो धूप में पसर कर अपने छौनों को दूध पिला रही है - वह भी नागार्जुन की संवेदना की हकदार है क्योंकि यह भी तो मादरे-हिंद की बेटी है। यहाँ इस कविता में जीवन की क्षुद्रता का ऐश्वर्य मिलता है। और इसीलिए यह कविता केवल एक मादा सूअर की कविता नहीं है, यह जीवन मात्र के प्रति, उसके क्षुद्रतम अंश के प्रति कविता का अर्घ्य है। नागार्जुन की संवेदना इतनी व्यापक है कि यहाँ सब कुछ के लिए स्थान है, कुछ भी वर्जित या त्याज्य नहीं है।

अब आप एक दूसरी कविता लें जो नागार्जुन की अत्यंत प्रसिद्ध कविता है 'अकाल और उसके बाद'। इसे ध्यान से पढ़ें :

'अकाल और उसके बाद'

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त

दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठीं घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद

अब आप निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें :

(क) इस कविता में मनुष्य का ज़िक्र कहीं है कि नहीं?
(ख) कुल कितने पशु-पक्षियों का ज़िक्र मिलता है?
(ग) चूल्हा और चक्की यहाँ सजीव हैं या निर्जीव?
(घ) मानव-जीवन का कौन-सा पक्ष यहां प्रस्तुत है?

अकाल पड़ने पर नागार्जुन की संवेदना केवल मनुष्य के लिए ही प्रगट नहीं होती, बल्कि पहले चरण में तो मनुष्य कहीं है ही नहीं, परोक्ष रूप से चूल्हा और चक्की के माध्यम से ही उसकी उपस्थिति का एहसास होता है। निरंतर मनुष्य के साथ रहने वाले चूहे, छिपकलियाँ, और कानी कुतिया और कौआ ही हैं जिनके माध्यम से नागार्जुन अकाल की स्थिति को व्यक्त करते हैं। इन पशुओं की विकलता ही कवि की संवेदना को जाग्रत करती है। जब ये प्राणी प्रसन्न, मनुष्य भी प्रसन्न - ऐसा भाव मिलता है। सम्पूर्ण जगत को, सृष्टि को एक अखंड सत्ता मानने के कारण ही ऐसा संभव हुआ है।

इसी तरह आप नीचे दी गई नेवला कविता पढ़ें तो पाएँगे कि यह कविता एक प्राणी के जीवन को व्यक्त करती है और उसके माध्यम से जेल में बंद उन सभी लोगों के जीवन और स्वाधीनता की आकांक्षा को। अब आप नागार्जुन की उन सभी कविताओं की सूची बनाएँ जिनमें पशु-पक्षी नायक या सहनायक हैं। साथ ही यह भी पता लगाएँ कि हिंदी के अन्य किन कवियों में इतने पशु-पक्षी मिलते हैं।

'नेवला'

कौन नहीं लाड़ लड़ाना चाहता है इससे?
कौन नहीं गोद में उठा लेना चाहेगा इसको?
कौन नहीं खुश होता है
इसकी आँखों में आँखें डालकर?
जम्बू, जमूरा, मोतिया, दुलरुआ...
जाने कितने नाम मिल गए हैं इसे!
-- हम सारे ही बंदियों का
बड़ा ही लाड़ला खिलौना है यह तरूण नेवला...

एक बार मोतिया ने
मेरी नाक की नोक में
गड़ा दिए थे अपने दाँत --
नहीं, वो गुस्से में नहीं था
वह लाड़ लड़ाने के मूड में था
लेकिन मैं तो उस दोपहरी में
लेटा था, झपकियाँ ले रहा था
मैं कतई नहीं था खिलवाड़ के मूड में
सो, शैतान ने
अपने पैने दाँत गड़ा दिए थे
इस बूढ़े बंदर की नाक की नोक पर
बड़ा ही गुस्सा आया था....
खैर, खरोंच-वरोंच नहीं पड़ी थी
पीछे, सुदामा से बतलाया तो उसने ठहाके मारे
फिर, देर तक मैं भी हँसता रहा था।
अखलाक को मालूम हुआ
अखिलेश (पांडे) को मालूम हुआ
दीना और मुंद्रिका को मालूम हुआ
हँसते-हँसते सभी के पेटों में बल पड़ गए!

मैं खुद भी हँसता रहा था देर तक
खैर, खरोंच-वरोंच नहीं आयी थीं!

तू रह-रहकर कहाँ गुम हो जाता है?
हफ्ता-हफ्ता, दस-दस रोज़ गायब रहता है!
देख जमूरे, तेरी आवारगी बेहद खलती है हमें
अब तुझ पर पिटाई पड़ने ही वाली है मोतिया!
हाँ, बतलाए दे रहा हूँ
अब कोई तुझे माफ़ नहीं करेगा --
अच्छा, बतला तो भला!
कहाँ-कहाँ रहा पिछले दिनों?
जेलर के क्वार्टर में यानी आनन्दी प्रसाद के घर में?
याकि मंजर बाबू के उस छोटे क्वार्टर में?
बोले वे, कहाँ रहा इतने दिन?
च्युः च्युः च्युः च्युः! आः आः आः आः
मोतिया, ओः ओः ओः
मोतिया! मोतिया!
हाँ, इसी तरह बड़ों की बात मानते हैं --
इन्सान तो क्या, हैवान तक निगाहें झुकाकर
करीब सरक आते हैं : हाँ, इसी तरह गर्दन झुका देते हैं
हाँ, इसी तरह!
बिल्कुल इसी तरह --
कम से कम घंटा भर तो अभी आराम कर ले
इस बूढ़े बंदर की गोद में!

अखलाक, अखलाक!
ये देखो, मोतिया मेरी गोद में लेटा है
जाने कितना थका है आज!
सारा दिन जाने कहाँ-कहाँ के चक्कर लगाता रहा है
अखलाक, लाओ तो प्लेट में खीर
हाँ, देखना, चार-पाँच चम्मच से ज्यादा न डालना!
क्या होगा सरऊ को ज्यादा खीर चटाकर?
ओह, नहीं अखलाक, मेरा मतलब यह नहीं था
जरी-सी इत्ती-सी खीर!
अमाँ, तुम तो भारी किरपिन हो यार....
थोड़ी-सी और डालो बेटे!
'जमूरे को पाकर'
अपनी पीली लुंगी संभालते-संभालते
मुस्कुराकर बोला अखलाकः
'बेहद सेंटिमेंटल हो उठते हैं बाबा आप तो!'
और, इधर --
प्लेट में चम्मच की खटपट सुनते ही
मोतिया ने लगाई छलाँग!
खीर अभी बिल्कुल गर्म है....
पतीला अभी बिल्कुल गर्म है....
पतीला चूल्हे से उतारकर रख गया है रामबचन
ताज़ा-ताज़ा दूधिया भाप
हवा में घुल उठा है.....

मोतिया भली-भाँति ट्रेण्ड है
गर्मा-गर्म खीर को वो अपनी चंगुल से
नीचे सीमेंट वाली फर्श पर बिखेर चुका है

चप-चप-चप-चप...शप-शप-शप-शप
चाट रहा है खीर मोतिया जल्दी-जल्दी में
जाने कैसी हड़बड़ी में है वो
जाने कितना भूखा है वो
चंगुल से बिखेस-बिखेरकर फर्श पर खीर
शपाशप-चपाचप चाट रहा है
उसकी यह फुर्ती देखते ही बनती है
रामबचन, सुदामा, मुंद्रिका, अखिलेश पाण्डे
मोहनिया बाबू, नौशाद, अखलाक,
दसई, हकेन्दू, कर्मा, सलीम --
मोतिया के ईद-गिर्द आके जमा हो गए हैं
कमर में झटका देता हुआ सुदामा
और दो कलछी खीर निकाल ले आता है :
'ओह! ओह! च्च-च्च-च्च
बड़ा भुखायल मालूम पड़ता है जमूरा
खा रे खा! तेरे खातीर
बाबा आज ख़ीर-पाटी दे रहे हैं
अरे, हमारे इस तीन नम्बर वार्ड में
नित्तह खीर घुटती है शाम को तो....
ब्बा रे ब्बा, क्खा रे क्खा.... जमूरा मेरे!'
सुदामा कहता है --
'लगता है कई दिन बाद आज
जमूरे को खीर का 'सबाद' मिला है --
मगर, जमूरे, आज तेरे को सारी रात हम
मिसा-बंदी बना के रखेंगे
सबेरे चार-पाँच बजे रिहा करेंगे
क्या बाबा जमूरे को अभी भागने देंगे?
जो हुकुम होगा आपका, वही न करेंगे हम...

अब होली के दिन आ गए
शाम को पाँच बजे से ही मच्छरों का हमला शुरू हो जाता है
अलः सुबह तक उनकी कारस्तानी चलती रहती है
लेकिन मोतिया है कि इन मच्छरों से सुरक्षित है
अभी रात के दो बजेंगे --
मगर देखो तो शैतान किस कदर
सुख की नींद सो रहा है
अखलाक की मसहरी के अन्दर
बेसुध-बेखबर नींद खींच रहा है!
इसे क्या पर्वाह है इन साले मच्छारों की!
रात्रिशेष में, ठीक पाँच बजे, मोतिया बाहर निकल भागेगा
या कि आधा घण्टा पहले ही
अपनी पतली थूथून घुसेड़कर मसहरी से सरकेगा
सलाखों की फाँक से बरामदे में पहुँचेगा
और फिर नींबू की छोटी झाड़ से आगे होगा
अखाड़े के करीब रातरानी के छाँटे-तराशे पौधे के पास
या कि बैंगन की क्यारियों के करीब
पाखाना-पेशाब से निबट लेगा
और, तब फिर, शुरू हो जाएगी जमूरे की दिनचर्या
हो सकता है, वो अगले दो तीन-दिन दिनों तक
इस वार्ड के विशाल प्राँगण में कहीं नजर ही न आए।
मंजरबाबू के क्वार्टर में बचपन गुजार चुका है न!
मंजर साहब ने छोटी-छोटी ताजा मछलियाँ खिलाकर

बड़े जतन से पाला-पोसा था –
मोतिया के बीसियों नाज-नखरे झेले हैं मंजरबाबू ने
उन दिनों वो नए-नए बक्सर आए थे
अपना क्वार्टर नहीं था उनका
एक हम पेशा (सब-जेलर) सज्जन के साथ,
रहना पड़ता था बेचारे को। जैसे-तैसे वक्त गुजार रहे थे
फेमिली को नहीं लाए थे मंजरबाबू
फिर एक दिन वो हमपेशा साहबान
अकेले में स्वर धीमा करके बोले थेः
देखिए साहब, हमारे बच्चे अभी छोटे हैं
होगा मोतिया आपका लाड़ला
लेकिन खतरनाक जानवर है न!
यह हमारे बच्चों की जूजी न काट खाए
नहीं साहब, इसे हटाइए यहाँ से! .....
फिर हुआ यही कि चार दिनों की छुट्टी लेकर
मंजर बाबू सीधे नवादा पहुँचे
इकलौती बिटिया वाले सास-ससुर को मना-मुनू कर
अपनी बेगम साहबा को बक्सर ले आए
यानि कि इस मोतिया की खातिर
मंजर साहब उन हमपेशा साहबान के यहाँ से
खुद ही हट गए! हँ, जानवर तो जानवर ठहरा न!
गुफ्तगू में मंजर बाबू ने यह सब बतलाया उस रोज़....
तो जाहिर है कि मंजर साहब का क्वार्टर
मोतिया का वह अपना ही क्वार्टर है।

यह लीजिए
ठीक 3.22 पर 'खन्न' की आवाज़ हुई
छोटी केतली का ढक्कन मीट-शेफ से नीचे गिरा है
ज़रूर ही मोतिया की करतूत है
दूध की गन्ध पाकर वह मीट-शेफ के माथे पर
पहुँच गया है लगा के छलाँग
ढक्कन खोलने की कोशिश में
केतली फर्श पर गिरा दी है
अखलाक के 'सुपुत्र' ने
आखिर आधा चम्मच दूध तो उसे मिला ही होगा
मगर फिर इत्ती रात मोतिया भागकर गया किधर?
देखूँ तो अपनी मसहरी से बाहर निकलकर....
(लालटेन को अन्दर रखकर लिखना-पढ़ना होता है न!)
क्या पता, बिल्ली की कारगुजारी हो!
वो भी तो दूध की चटोरी होती है.....
अकेले क्या मोतिया ही दूध का शौक़ीन है यहाँ?

ओह, अब मैं क्या बतलाऊँ आपसे!
सचमुच यह मोतिया ही था
फर्श पर केतली गिराकर वही भागा है –
हाँ, वो सचमुच ही गायब है –
अखलाक की मसहरी के कोने में
सिरहाने की तरफ दुबककर
अभी-अभी वह किस तरह सोया पड़ा था!
गुड़ी-मुड़ी होकर, दुबककर गहरी नींद में कैसे सोया था!
आवारा कहीं का.....
अभी-अभी ग्यारह बजे, जब हम दूध ले रहे थे

अखलाक ने पुलकित स्वरों में कहा थाः
'बाबा, अब यह सारी रात इसी तरह सोएगा
कहीं नहीं जाएगा यहाँ से.....'
मैंने अखलाक वाली लालटेन की बत्ती खूब तेज कर दी
कि शायद मोतिया नींद की खुमारी में उठा हो
और पहलू बदलकर पायताने की तरफ जा लेटा हो
नहीं, वो सचमुच निकल गया है
अखलाक मसहरी के अन्दर अकेला है —
लो बेटे, तुम्हारा सुपुत्र चुपचाप खिसक गया, न!
अब वो कई रोज बाद तुम्हारी सुध लेगा।

अरे वाह, वाह रे जमूरे, वाह!
तू वापस कब लौटा पाजी?
फिर दुबक गया अखलाक के कम्बल में!
क्यों न हो, चार बजे हैं तो रात नहीं भीगेगी!
बसन्त-शेष जो ठहरा यह मौसम....
हवा में कैसी खुनकी है।
रात के चौथे पहर का ठण्डा पवन —
'गुलाबी जाड़ा' तो भला कौन कहेगा इसे!
नहीं, नहीं, अब मैं फिर लालटेन की बत्ती तेज नहीं करूँगा...
तेरी पूंछ तो साफ-साफ दिखाई दे गई है मुझे!
लेकिन, मोतिया, तू वापस कब लौटा?
अरे वाह, वाह रे जमूरे, वाह!
तेरे नेचर का पूरा-पूरा पता कहाँ लगा सका हूँ अब तक —
अखलाक नौ महीनों से तुझे जानता है
मुझे तो यहाँ एक सौ दस ही रोज हुए हैं न?
मैं नहीं परिचित हो सका हूँ उतना तुझ से।
लेकिन हाँ, अब भाग मत जाइयो सबेरे-सबेरे
आज तेरे को मैं मछली खिलाऊँगा

एक नहीं, दो दिलाऊँगा....हाँ, रे जमूरे, हाँ!
देखना, सुबह-सुबह भाग नहीं जाना अब!
खीर तो खैर दुपहर बाद रोज पकती है
मगर आज भी मुंद्रिका मछलियाँ जरूर लाएगा
कल भी लाया था, वह अक्सर लाता है मछलियाँ

ताजा गोश्त का लाल टुकड़ा
मजबूत सुतरी के छोर में बँधा है
फर्श से ढाई-तीन फुट ऊपर लटकाए
अखलाक ने वो सुतरी ऊँचे थाम रक्खी है...
मोतिया बार-बार छलाँग लगा रहा है
लपक रहा है बार-बार गोश्त के टुकड़े की ओर
पूरी ताकत लगाकर उछल रहा है
गुस्से में चीख रहा है..... किर्र....किर्र....किर्र!
उबाल खाकर कुलाँचे भर रहा है बार-बार
बीच-बीच में ज़रा-सी देर के लिए
बस, लम्हे-भर के लिए
पल-भर के लिए यानी दस-पाँच सेकण्ड के लिए
मोतिया दम मार लेता है
फिर पूरी ताकत लगाकर
लपकता है गोश्त के टुकड़े की ओर
मगर वो कामयाब कहाँ हुआ?

यह खेल क्या देर तक चलता रहेगा?'
नहीं, अब खत्म होगा शो...
तमाशबीन अपनी-अपनी राह धरेंगे
मोतिया गोश्त का टुकड़ा, सुतरी सहित, लेकर
उधर रातरानी की झाड़ की ओट में जा बैठेगा
लीजिए, आखिर उसने लपक ही लिया
पकड़ इतनी पक्की है कि वे खुद ही टँग गया है
बड़ी मजबूती से लटका है मोतिया अधर में
गोश्त के टुकड़े में गड़े हैं उसके दाँत
वो हवा में झूल रहा है
उस्ताद और जमूरे की यह नटबाजी
ढेर सारे लोगों का ध्यान अपनी तरफ खींच चुकी है...

बीच में हमने यह भी देखा, कि
उछल-कूद में विफल होकर
वह अपने उस्ताद के कन्धे पर चढ़ गया
(ठीक इंसी तरह जामुन के पेड़ पर चढ़ता है गोह
छिपकली की टोह में, चुपचाप, लेकिन फुर्ती से)
कन्धे से बाँह पर, या वापस फिर कमर पर
पोजीशन जमाकर उसने गर्दन लम्बी कर ली
इस तरह बीच में ही गोश्त वाली सुतरी को
हड़प लेने की कोशिश कर रहा था मोतिया

आखिर परेशान वो गरीब
फर्श पर दम लेने की खातिर लेट गया
उछल-कूद के, अप्रने पैंतरे सहेज कर
(स्पन्दनशून्य, चेष्टाविहीन उसकी वो भूमिका
किसी सिद्ध हठयोगी की शवाऽऽसन वाली मुद्रा थी क्या!)
हमने मान लियाः मोतिया थककर लस्त-पस्त हो चुका है...
अखलाक, इस पर रहम करो
अब बेचारे को ज्यादा न सताओ
गोश्त का टुकड़ा इसके हवाले कर दो
नहीं, नहीं, अब यह खेल खत्म हुआ...
फिर यक-ब-यक जमूरे ने ऊँची छलाँग लगा दी
'हाई जम्प' के अपने पिछले रिकार्ड तोड़ गया
मय सुतरी के, गोश्त का वो टुकड़ा उसने झटक़ लिया था
हमारे लाड़ले अखलाक बाबू सौ फीसदी धोखा खा गए थे
उस रोज उनका पालतू 'सुपुत्र' उनसे 20 निकला आखिर

14.3.3 दैनन्दिन जीवन

जैसा कि हमने अभी देखा, नागार्जुन के लिए जीवन का प्रत्येक कण पवित्र है और कविता का सहज स्वाभाविक अवलम्ब। जब 'नेवला' या 'मादा सूअर' उनकी संवेदना को झकझोर सकती है तो फिर 'थाना धमदाहा, बस्ती रूपउली' का प्राइमरी स्कूल मास्टर या 'खुरदुरे पैरवाला' रिक्शावाला या 'नगधड़ंग छोकरा' क्यों नहीं? जीवन के तलछट कहे जाने वाले गरीब-गुरबों का जीवन नागार्जुन के हृदय को द्रवित कर देता है। बड़ी विकलता से नागार्जुन दैनंदिन जीवन के कार्य-व्यापारों का और गरीबी का चित्रण करते हैं। घर में बच्चा बीमार है और गृहिणी फटी दरी पर बैठ कर चावल चुन रही है। फिर बच्चे की दंतुरित मुस्कान है जो "मृतक में भी डाल देगी जान'। बस-ड्राइवर की सीट के सामने उसकी बिटिया ने टाँग दी हैं अपनी गुलाबी चूड़ियाँ जो पूरे सफर में ड्राइवर की साथी हैं' और स्नेह-पाथेय। और बैलाडीला वाली सड़क पर दंतेवाड़ा से 55 किलोमीटर आगे शालवानों के निविड़ टापू में खोता हुआ अधेड़ माड़िया है। तो, आप देख रहे हैं कि नागार्जुन को कितनी छोटी-छोटी बातें और चीज़ें रोक लेती हैं, अपनी तरफ खींचती हैं। और इन छोटी-छोटी बातों से उनकी सम्पूर्ण जीवन-दृष्टि बनती है।

एक कविता हम लें 'इन सलाखों से टिका कर भाल' पहले कविता को ध्यान से पढ़िए। फिर इन सवालों पर विचार कीजिए :

'इन सलाखों से टिका कर भाल'

इन सलाखों से टिकाकर भाल
सोचता ही रहूँगा चिरकाल
और भी तो पकेंगे कुछ बाल
जाने किसकी/ जाने किसकी
और भी तो गलेगी कुछ दाल
न टपकेगी कि उनकी राल
चाँद पूछेगा न दिल का हाल
सामने आकर करेगा वो न एक सवाल
मैं सलाखों में टिकाए भाल
सोचता ही रहूँगा चिरकाल।

(क) इस कविता का आशय क्या है?
(ख) कविता के मुख्य उपकरण क्या हैं?
(ग) कवि की जीवन-दृष्टि क्या है?

जैसा कि आप देख रहे हैं कविता शुरू होती है सलाखों में टिके भाल के बिम्ब से - यानी परवशता, अधीनता की स्थिति है। इसके ठीक बाद है - 'सोचता ही रहूँगा चिरकाल'। यह सोचना उस 'भाल' का विद्रोह है और मुक्ति भी जो सलाखों में बंद है। बालों का पकना बढ़ती उम्र को और समय के प्रवाह को दिखलाता है। 'दाल का गलना' विरोधियों की सफल होती चाल को। राल का टपकना उनकी लिप्सा और हिंसा को। और चाँद का हाल न पूछने आना झूठी आशा के अंत को। फिर भी 'सोचना' जारी रहेगा - 'सोचना' यानी प्रतिरोध यानी मुक्ति का यत्न। इस तरह एक छोटी-सी कविता छोटे-छोटे बिम्बों के माध्यम से इतनी बड़ी बात कहती है। यहाँ संवेदना बहुत जटिल है, निरंतर स्थानांतरित होती हुई, परंतु अंततः 'सोचता ही रहूँगा चिरकाल' के दृढ़ उद्घोष में स्थिर होती। यह विद्रोह की संवेदना है जो नागार्जुन काव्य का एक मुख्य तत्व है। नागार्जुन ने भारतीय जन के विद्रोह को, छोटे से छोटे और बड़े से बड़े विद्रोह को वाणी दी है। जहाँ कहीं संघर्ष है नागार्जुन संवेदित होते हैं और व्यग्रता से कहते हैं :

यही धुआँ मैं ढूँढ रहा था
यही आग मैं खोज रहा था

14.3.4 राजनीति

नागार्जुन काव्य का एक बड़ा अंश राजनीतिक है। देखना दिलचस्प होगा कि नागार्जुन की राजनीतिक कविता किस माने में रघुवीर सहाय से या मुक्तिबोध से भिन्न है। आप इन तीनों कवियों को पढ़ें। धूमिल को भी पढ़ें और तुलना करके देखें तो महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आएँगे। नागार्जुन की राजनीतिक कविता में संघर्ष, विद्रोह तथा जनता की जय में विश्वास मिलता है। छोटी से छोटी लड़ाई भी नागार्जुन को बेचैन कर देती है - 'बस सर्विस बंद रही तीन दिन तीन रात' से लेकर 'भोजपुर' तक। यहाँ हम उनकी एक प्रसिद्ध कविता पढ़ें :

'शासन की बंदूक'

खड़ी हो गई चाँपकर कंकालों की हूक
नभ में विपुल विराट-सी शासन की बूंदूक
उस हिटलरी गुमान पर सभी रहे हैं थूक
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक
बढ़ी बधिरता दसगुनी, बने विनोबा मूक
धन्य-धन्य वह, धन्य वह, शासन की बंदूक
सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक
जहाँ-तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक
जली ठूँठ पर बैठकर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक।

यहाँ 'जले ठूँठ पर बैठ कर गयी कोकिला कूक, बाल न बांका कर सकी शासन की बंदूक' में वह कोकिला ही जीवन का पक्ष है, संघर्षरत भारतीय जन का प्रतीक। नागार्जुन अपनी सारी संवेदना उस पर न्योछावर करते हैं :

गुम्फित कर रखी है हमने
ये निर्मल-निश्चल प्रशस्तियाँ

हालाँकि कुछ आलोचकों की राय है कि नागार्जुन की राजनीतिक कविताओं का अच्छा-खासा हिस्सा सामान्य कोटि का है। हो सकता है हो, पर वहाँ भी नागार्जुन की संवेदना का विस्तार तो मिलता ही है। इतनी बड़ी संख्या में राजनीतिक विषयों पर कविताएँ हिंदी के किसी दूसरे कवि ने संभवतः नहीं लिखीं। इन सबके पीछे संवेदना का ताप तो है ही। यहाँ हमें याद रखना है कि प्रायः कविता में संवेदना को प्रकृति, प्रेम तथा कोमल प्रसंगों से जोड़ कर देखा जाता है जबकि जीवन का प्रत्येक अंश, प्रत्येक घटना एक कवि को संवेदित कर सकती है। नागार्जुन की कविताएँ दिखलाती हैं कि संवेदना के अनेक रूप, अनेक स्तर हो सकते हैं। यदि नागार्जुन को बादल प्रिय है तो साधारण जन भी, उनका रोजमर्रे का संघर्ष भी और बड़े आंदोलन भी। तेलंगाना आंदोलन तथा नक्सलबाड़ी आंदोलन को नागार्जुन ने विशेषकर अपने काव्य में स्थापित किया :

आज बंधनमोक्ष के त्योहार का आरंभ होता है
'उपद्रव' 'उत्पात' कह कर कुबेरों का वर्ग रोता है-
सर्वहारा ने निकाला है स्वंय ही मुक्ति का यह मार्ग

साथ ही यह भी सही है कि हिंदी में गांधीजी पर जितनी कविताएँ लिखी गयी हैं उनमें नागार्जुन की कविता 'गाँधी' अलग से याद आती है :

बोले तुम केवल पाँच मिनट
चुप रहे आदमी दश हजार, बस पाँच मिनट!

इससे लगता है कि नागार्जुन की संवेदना बहुत व्यापक है और जहाँ कहीं जन-शक्ति का उद्रेक है वहीं नागार्जुन की कविता का उद्‌गम।

14.3.5 व्यंग्य की धार

नागार्जुन के साथ एक विशेष बात यह है कि वह व्यंग्य के भी बेजोड़ कवि हैं। संभवतः कबीर के बाद व्यंग्य का इतना बड़ा कवि दूसरा नहीं, ऐसा आलोचकगण कहते हैं।

'यह निर्विवाद है कि कबीर के बाद हिंदी कविता में नागार्जुन से बड़ा व्यंग्यकार अभी तक कोई नहीं हुआ।' (डॉ0 नामवर सिंह, भूमिका, प्रतिनिधि कविताएँ) हम आपसे एक दो सवाल पूछना चाहते हैं :

(क) व्यंग्य में संवेदना कैसे व्यक्त होती है?
(ख) क्या प्रेम और व्यंग्य दोनों एक ही कविता में संभव हैं?

वास्तव में संवेदना की तीव्रता तथा एक पक्ष से प्रेम की अधिकता एवं दूसरे से घृणा ही हमें व्यंग्य की ओर ले जाती है। जैसाकि अभी 'शासन की बंदूक' कविता में हमने देखा 'कोकिला' से प्रेम और 'बंदूक' से घृणा के द्वंद्व में ही कविता स्थित है। नागार्जुन कहते हैं :

नफरत की अपनी भट्‌ठी में
तुम्हें गलाने की कोशिश ही
मेरे अंदर बार-बार ताकत भरती है
.....
प्रतिहिंसा ही स्थायी भाव है मेरे कवि का
जन-जन में जो ऊर्जा भर दे, मैं उद्‌गाता हूँ उस रवि का

नागार्जुन पूरी शक्ति से इस व्यवस्था पर प्रहार करते हैं। जैसा कि डॉ0 नामवर सिंह लिखते हैं, 'इस प्रहार में धार वहाँ आती है जहाँ आवेश संयत होकर व्यंग्य का रूप ले लेता है और 'कत्थई दाँतों की मोटी मुस्कान बेतरतीब मूँछों की थिरकन बन जाती है'।...इसी तरह भारत में ब्रिटेन की रानी के आने पर स्वागत की धूम-धाम देखकर नागार्जुन ने कहा, 'आओ रानी हम ढोयेंगे पालकी, यही हुई है राय

जवाहरलाल की'।" व्यंग्य में संवेदना की धार उलटी चलती है, जन से प्रेम ही शासन के प्रति घृणा में बदल जाता है।

14.3.6 जीवन के कोमल पक्ष : प्रेम एवं सौंदर्य

नागार्जुन की राजनीतिक एवं व्यंग्यपरक कविताओं के कारण अनेक बार हमारा ध्यान उन कविताओं की ओर नहीं जाता जिनमें स्त्री के प्रति प्रेम अथवा देह के सौंदर्य का वर्णन नागार्जुन ने किया है। नागार्जुन की अनेक कविताएं बहुत कोमल संवेगों की कविताएँ हैं। आप ऐसी कविताओं की एक सूची तैयार करें और ऐसी ही एक सूची शमशेर या धर्मवीर भारती की कविताओं की भी तैयार करें।

'सिंदूर तिलकित भाल', 'तन गई रीढ़', 'यह तुम थीं', 'पिछली रात', 'न आए रात भर मेल ट्रेन', 'एक फांक आँख एक फांक नाक', कुछ ऐसी ही कविताएँ हैं जिनमें संवेदना का एक नया आयाम देखने को मिलता है। अच्छा होगा अगर आप नागार्जुन की इन कविताओं की तुलना शमशेर की प्रेमपरक कविताओं से करें। शमशेर अपनी गहन ऐंद्रिकता के लिए प्रसिद्ध हैं, इसलिए यह तुलना रोचक होगी। मैं यहाँ दोनों की एक-एक कविता दे रहा हूँ और आपसे अपेक्षा है कि इनका तुलनात्मक अध्ययन करें एवं जो भी निष्कर्ष मिलें उन्हें लिख लें।

नागार्जुन	शमशेर
कविता : तन गई रीढ़	**कविता : थरथराता रहा**
झुकी पीठ को मिला किसी हथेली का स्पर्श तन गई रीढ़	थरथराता रहा जैसे बेंत मेरा काय ... कितनी देर तक आपादमस्तक एक पीतल पात मैं थरथर। काँपती काया शिराओं भरी झन-झन देर तक बजती रही और समस्त वातावरण मानो झंझावत ऐसा क्षण वह आपात स्थिति का।
महसूस हुई कंधों को पीछे से, किसी नाक की सहज उष्ण निराकुल साँसें तन गई रीढ़	
कौंधी कहीं चितवन रंग गए कहीं किसी के होंठ निगाहों के जरिए जादू घुसा अंदर तन गई रीढ़	
गूँजी कहीं खिलखिलाहट टूक-टूक होकर छितराया सन्नाटा भर गये कर्णकुहर तन गई रीढ़	
आगे से आया अलकों के तैलाक्त परिमल का झोंका रग-रग में दौड़ गई बिजली तन गई रीढ़	

एक अन्य कविता हम लें। 'न आये रात भर ट्रेन' आप इसे ध्यान से पढ़िए और नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर ढूँढिए :

'न आये रात भर ट्रेन'

बैठा बैठा मेल ट्रेन की प्रतीक्षा में
बाहर निकल आए हैं आँखों के डोरे
घंटा भर लेट
आधा घंटा और लेट
पैंतालीस मिनट और लेट

आह रे विधाता, क्या हुआ तुझे?
कई दफा चटखाई उँगलियाँ
कई बार आईं जँभाई
चाट गया अनेकों मैंगजीनें
सुड़क आया हूँ सात कप चाय
खींच गया हूँ दो पाकिट सिगरेट
आह रे विधाता, अब क्या करूँ?
रँगी-रची पेटी से उँगठी
गौना कराई दुलहन
सोई है या जगी
घूँघट की आड़ में!
लेकिन दूल्हा भर रहा है खर्राटें
पास ही काले कम्बल पर
सिरहाने सेंतकर सामान
इनकी रखवाली कर रही है
सिक्कों की माला और पत्तीदार बाजूबंद पहले
दुलहन की अर्द्धव्यस्क नौकरानी
लाल किनारी की पीली साड़ी में
बिल्कुल मांगुर मछली सी है उसकी देह की कान्ति
लगती है कितनी अच्छी
अब क्यों निकलेंगे आँखों के डोरे
न आए रातभर मेलट्रेन!

(क) गाड़ी के इंतज़ार में बेचैनी और थकावट का वर्णन कैसे हुआ है?
(ख) कविता में दो स्त्रियाँ हैं? किसका वर्णन अधिक विस्तार से हुआ है और क्यों?
(ग) वाचक की दृष्टि दुल्हन की 'अर्द्धवयस्क' नौकरानी पर ही क्यों टिकती है?
(घ) आसक्ति किन पंक्तियों में व्यंजित है?

नागार्जुन में स्त्री-सौंदर्य हमेशा अपनी आह्लाददायी तीव्रता के साथ उपस्थित मिलता है। 'एक फाँक आँख एक फाँक नाक' में एक स्त्री मुखड़े के अर्द्धांश के बारे में नागार्जुन कहते हैं :

कितनी देर तक रही नाचती कपाल के भीतर की कटोरी में
धारण किए क्रमशः तकली का रूप
एक फाँक आँख .... एक फाँक नाक ....

सौंदर्य, चाहे जिस रूप में प्रकट हो, नागार्जुन की कविता की कटोरी में तकली की तरह नाचता रहता है। यह उनकी संवेदना का एक सर्वथा भिन्न पर महत्वपूर्ण धरातल है।

14.4 संवेदना की जटिलता : कुछ और पक्ष

अब हम तीन ऐसी कविताओं को लें जो एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं, जो नागार्जुन-काव्य की शिखर उपलब्धियों में गिनी जाती हैं। अब तक हमने देखा कि कैसे जीवन के विभिन्न पक्ष नागार्जुन को संवेदित करते हैं और नागार्जुन की कविताएँ उन्हीं संवेदनों का विविध प्रकाश है। कई बार संवेदना एकरेखीय होती है, यानी एक कविता में एक ही तरह की संवेदना व्यक्त है, जैसे प्रेम की कविता है तो केवल प्रेम के ही संवेग मिलते हैं। लेकिन अब जो कविताएँ हम ले रहे हैं उनमें संवेदना का जटिल रूप देखने को मिलता है। कविताएँ हैं : 'उनको प्रणाम', 'मंत्र' और 'चन्दू मैंने सपना देखा'। रघुवीर सहाय को 'उनको प्रणाम' कविता बहुत प्रिय थी और केदारनाथ सिंह को 'मंत्र' बहुत प्रिय है। आप इन तीनों कविताओं को पढ़ें और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

'उनको प्रणाम'

जो नहीं हो सके पूर्ण-काम
मैं उनको करता हूँ प्रणाम।

कुछ कुंठित औ कुछ लक्ष्य-भ्रष्ट
जिनके अभिमंत्रित तीर हुए,
रण की समाप्ति के पहले ही
जो वीर रिकुल तमिर हुए!
- उनको प्रणाम!
जो छोटी-सी नैया लेकर
उतरे करने को उदधि-पार,
मन की मन में ही रही, स्वयं
हो गये उसी में निराकार!
- उनको प्रणाम!
जो उच्च शिखर की ओर बढ़े
रह-रह नव-नव उत्साह भरे,
पर कुछ ने ले ली हिम-समाधि
कुछ असफल ही नीचे उतरे!
- उनको प्रणाम!
एकाकी और अंकिचन हो
जो भू-परिक्रमा को निकले,
हो गये पंगु, प्रति-पद इतने
अदृष्ट के दाव चले!
- उनको प्रणाम!
कृत-कृत नहीं जो हो पाए,
प्रत्युत फाँसी पर गये झूल
कुछ ही दिन बीते हैं, फिर भी
यह दुनिया जिनको गयी भूल!
- उनको प्रणाम!
थी उग्र साधना, पर जिनका
जीवन नाटक, दुखांत हुआ,
था जन्म-काल में सिंह लग्न
पर कुसमय ही देहांत हुआ!
- उनको प्रणाम!
दृढ़ व्रत औ' दुर्दम साहस के
जो उदाहरण थे मूर्ति-मन्त,
पर निरवधि बंदी जीवन ने
जिनकी धुन का कर दिया अंत!
- उनको प्रणाम!
जिनकी सेवाएँ अतुलनीय
पर विज्ञापन से रहे दूर
प्रतिकूल परिस्थिति ने जिनके
कर दिए मनोरथ चूर-चूर!
- उनको प्रणाम!

'मंत्र'

ओं शब्द ही ब्रह्म हैं
ओं शब्द और शब्द और शब्द और शब्द
ओं प्रणव, ओं नाद, ओं मुद्राएँ
ओं वक्तव्य, ओं उद्‌गार, ओं घोषणाएँ
ओं भाषण...
ओं प्रवचन...
ओं हुंकार, ओं फटकार, ओं शीत्कार
ओं फुसफुस, ओं फुत्कार, ओं चित्कार
ओं आस्फालन, ओं इंगित, ओं इशारे
ओं नारे और नारे और नारे और नारे

ओं सब कुछ, सब कुछ, सब कुछ
ओं कुछ नहीं, कुछ नहीं, कुछ नहीं
ओं पत्थर पर की दूब, खरगोश के सींग
ओं नमक-तेल-हल्दी-जीरा-हींग
ओं मूस की लेंड़ी, कनेर के पात
ओं डायन की चीख, औघड़ की अटपट बात
ओं कोयला-इस्पात-पेट्रोल
ओं हमी हम ठोस, बाकी सब फूटे ढोल,

ओं इदमन्नं, इमा आपः, इदमाज्यं, इदं हविः
ओं यजमान, ओं पुरोहित, ओं राजा, ओं कविः
ओं क्रांतिः क्रांतिः सर्वग्वं क्रांतिः
ओं शांति शांतिः सर्वग्व शांतिः
ओं भ्रांतिः भ्रांतिः सर्वग्वं भ्रांतिः
ओं बचाओ बचाओ बचाओ बचाओ
ओं हटाओ हटाओ हटाओ हटाओ
ओं घेराओ घेराओ घेराओ घेराओ
ओं निभाओ निभाओ निभाओ निभाओ

ओं दलों में एक दल अपना दल, ओम्
ओं अंगीकरण, शुद्धीकरण, राष्ट्रीयकरण
ओं मुष्टीकरण, तुष्टीकरण, पुष्टीकरण
ओं एतराज, आक्षेप, अनुशासन
ओं गद्दी पर आजन्म वज्रासन
ओं ट्रिब्युनल, ओं आश्वासन
ओं गुटनिरपेक्ष सत्तासापेक्ष जोड़-तोड़
ओं छल-छंद ओं मिथ्या ओं होड़म होड़
ओं बकवास ओं उद्घाटन
ओं मारण-मोहन-उच्चाटन

ओं काली काली काली महाकाली महाकाली
ओम्मार मार मार, वार न जाए खाली
ओं अपनी खुशहाली
ओं दुश्मनों की पामाली
ओम्मार, मार, मार, मार, मार, मार, मार
ओं अपोजिशन के मुंड बनें तेरे गले का हार
ओं ऐ ह्वीं क्ली हूं आड्.
ओं हम चबाएँगे तिलक और गाँधी की टाँग
ओं बूढ़े की आँख, छोकरी का काजल
ओं तुलसीदल, बिल्वपत्र, चंदन, रोली, अक्षत, गंगाजल

ओं शेर के दाँत, भालू के नाखून, मर्कट का फोता
ओं हमेशा हमेशा हमेशा करेगा राज मेरा पोता
ओं छूः छः फूः फूः फट् फिट् फुट्
ओं शत्रुओं की छाती पर लोहा कुट्
ओं भैरों, भैरों, भैरों, ओं बजरंग बली
ओं बंदूक का टोटा, पिस्तौल की नली
ओं डालर, ओं रूबल, ओं पाउण्ड
ओं साउण्ड, ओं साउण्ड, ओं साउण्ड

ओम् ओम् ओम्
ओम् धरती, धरती, धरती, व्योम, व्योम, व्योम

ओं अष्टधातुओं की ईंटों के भट्ठे
ओं महामहिम, महामहो, उल्लू के पट्ठे
ओं दुर्गा दुर्गा दुर्गा, तारा तारा तारा
ओं इसी पेट के अंदर समा जाए सर्वहारा
हरिः ओम् तत्सत्, हरिः ओम् तत्सत्।

'चंदू मैंने सपना देखा'

चंदू, मैंने सपना देखा, उछल रहे तुम ज्यों हिरनौटा
चंदू, मैंने सपना देखा, भभुआ से हूँ पटना लौटा
चंदू, मैंने सपना देखा, तुम्हें खोजते बद्री बाबू
चंदू, मैंने सपना देखा, खेल-कूद में हो बेकाबू

चंदू, मैंने सपना देखा, कल परसों ही छूट रहे हो
चंदू, मैंने सपना देखा, खूब पतंगे लूट रहे हो
चंदू, मैंने सपना देखा, लाए हो तुम नया कलैंडर
चंदू, मैंने सपना देखा, तुम हो बाहर, मैं हूँ बाहर
चंदू, मैंने सपना देखा, भभुआ से पटना आए हो
चंदू, मैंने सपना देखा, मेरे लिए शहद लाए हो

चंदू, मैंने सपना देखा, फैल गया है सुयश तुम्हारा
चंदू, मैंने सपना देखा, तुम्हें जानता भारत सारा
चंदू, मैंने सपना देखा, तुम तो बहुत बड़े डॉक्टर हो
चंदू, मैंने सपना देखा, अपनी ड्यूटी में तत्पर हो

चंदू, मैंने सपना देखा, इम्तिहान में बैठे हो तुम
चंदू, मैंने सपना देखा, पुलिस-भान में बैठो हो तुम
चंदू, मैंने सपना देखा, तुम हो बाहर, मैं हूँ बाहर
चंदू, मैंने सपना देखा, लाए हो तुम नया कलैंडर

प्रश्न :

(क) इनमें कौन-सी संवेदना अथवा संवेदनाएँ प्रमुख हैं?
(ख) क्या 'मंत्र' एक गंभीर कविता है अथवा हास्य प्रधान?
(ग) क्या 'उनको प्रणाम' नागार्जुन जैसे विद्रोही कवि के स्वभाव से मेल खाती है?
(घ) 'चंदू मैंने सपना देखा' का मूल भाव क्या है?
(ड.) 'मंत्र अराजक भावस्थिति की कविता है', व्याख्या करें?
(च) क्या 'चंदू मैंने सपना देखा' में चंदू की जगह कोई और नाम दिया जा सकता है?

ये तीनों कविताएँ किसी एक अथवा एक जैसी संवेदना की संवाहक नहीं हैं। ये मिश्रित संवेदनाओं की कविताएँ हैं। मानों अष्ट धातु की कविताएँ। 'उनको प्रणाम' में जय की आकांक्षा, पराजय का स्वीकार, परिस्थितियों की प्रतिकूलता और भविष्य में विश्वास सभी एक साथ व्यक्त हुए हैं। 'मत्र' में व्यंग्य है, हास्य भी और सर्वोपरि विडम्बना का भाव, अराजक स्थिति का संकेत और आदि से अंत तक पेबस्त करूणा की धारा - 'ओ इसी पेट के अंदर समा जाए सर्वहारा'। 'चंदू मैंने सपना देखा' स्वप्न और यथार्थ, वर्तमान और भविष्य, परिस्थितिवशता और आकांक्षा इन युग्मों के बीच का द्वंद्व मिलता है और बहुत हल्के-फुल्के ढंग से नागार्जुन गंभीर बात कहते हैं : स्वाधीनता की आकांक्षा की पूर्ति। आप देखेंगे कि इसमें सारे बिम्ब एक ही दिशा में जाते हैं जबकि मंत्र में सबकी दिशाएँ अलग-अलग हैं, जबकि 'उनको प्रणाम' में एक पूंजीभूत बिम्ब मिलता है।

14.5 सारांश

अब तक हमने जो बातें की उन्हें संक्षेप में कहना चाहें तो कह सकते हैं कि हमने नागार्जुन के काव्य में संवेदना के विभिन्न रूपों की चर्चा की। एक कवि जो कुछ देखता-सुनता, ग्रहण करता है सबका उस पर

प्रभाव पड़ता है। उसके मन पर सबकी छाप पड़ती है। वह हर चोट से झंकृत होता है। उसकी कुछ न कुछ प्रतिक्रिया होती है। वह दुखी होता है, खुश होता है। विस्मय, रोमांच, भय सबकी अनुभूति उसे होती है। वह हँसता भी है। क्रुद्ध भी होता है। आक्रमण भी करता है। ये सारे भाव उसमें उत्पन्न होते हैं। बाह्य जगत के संपर्क से उसमें जो कुछ घटित होता है उसे ही संवेदना कहते हैं। जो कवि जितना अधिक संवेदित होता है अर्थात् संवेदनशील होता है वह उतना ही बड़ा होता है।

नागार्जुन की कविता में अनेक संवेदन मिलते हैं। जीवन के अनेक रूप तथा स्थितियाँ। पशु-पक्षी हवा-पानी, खेत-बगीचे, नदी-पहाड़, बादल, मानव-जीवन, बचपन-जवानी, नारी-सौंदर्य, राजनीति, क्रांति, विद्रोह, संघर्ष, आकांक्षा, आशा-निराशा, जय-पराजय, राग-विराग, सब कुछ है यहाँ।

इनमें संवेदना के अनेक धरातल मिलते हैं। यही नागार्जुन की श्रेष्ठता है। यही उनकी कविता की शक्ति है। नागार्जुन न तो सिर्फ व्यंग्यकार हैं, न सिर्फ राजनीतिक कवि, न सिर्फ बादलों के कवि। नागार्जुन सम्पूर्ण जीवन के कवि हैं।

इकाई 15 नागार्जुन के काव्य का रचना-विधान

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 रचना-विधान के तत्व
  15.2.1 भाषा
  15.2.2 नाटकीयता
  15.2.3 व्यंग्य
15.3 नागार्जुन और रूप प्रयोग
15.4 सारांश
15.5 प्रश्न

15.0 उद्देश्य

प्रगतिशील कवि नागार्जुन पर आधारित यह दूसरी इकाई है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप जान सकेंगे कि :

- नागार्जुन के यहाँ एक कविता किस प्रकार से रूप या आकार ग्रहण करती है,
- भाषा के कितने रूप (तत्सम, बोलचाल आदि) किस प्रकार सर्जनात्मक ऊर्जा से भर उठते हैं,
- सरल, सहज लगने वाली भाषा अत्यधिक अर्थवान, सप्रयोजन बनकर कविता में आती है,
- नाटकीयता और व्यंग्य का तत्व किस प्रकार उनकी कविता को बहुलार्थमयी, विशिष्ट और बहुआयामी बनाता है, और
- नागार्जुन किसी एक रूप, छंद में बंध कर नहीं चलते उनके यहाँ ढेरों रूप, छंद, का खुलकर इस्तेमाल होता है।

15.1 प्रस्तावना

हम ने पिछले पाठ में नागार्जुन की कविता में संवेदना के विविध रूपों के बारे में बात की। देखा कि संवेदना कितनी विविध है और जीवन के कितने सारे पक्ष उनकी कविता में अभिव्यक्ति पाते हैं। लेकिन यह सब हुआ कैसे? यह सब संभव कैसे होता है? कविता बनती कैसे है? रचना-विधान का यही अर्थ है - रचना का बनना। हम एक उदाहरण से इसे समझ सकते हैं - जिस तरह कुम्हार (बर्तन बनाने वाला) मिट्टी के एक लोंदे को चाक पर रखकर घुमाते-संवारते उसे एक बर्तन या आकृति में बदल देता है, उसी तरह एक कवि भी जीवन के टुकड़े को कविता में बदलता है। एक कवि मिट्टी की जगह शब्दों का इस्तेमाल करता है। उसका माध्यम, उसकी सामग्री शब्द ही है। यानी भाषा। इन्हीं शब्दों से एक ढांचा तैयार होता है, एक रूप - वही कविता की निर्मिति या विधा है। यानी भाषा में ही कविता संभव होती है। इसलिए रचना-विधान को समझने के लिए सबसे पहले हम कविता को शब्दशः पढ़ते हैं। एक-एक शब्द के ज़रिए पूरे निर्माण को समझने की कोशिश करते हैं।

लेकिन रचना-विधान में और भी कई तत्व हैं। भाषा तो सर्वोपरि है ही। इसके अलावा हम यह भी देखते हैं कि कवि ने मिथक, प्रतीक, फंतासी का व्यवहार किस तरह किया है। उदाहरण के लिए क्या मुक्तिबोध और नागार्जुन फंतासी का इस्तेमाल एक ही तरह से करते हैं? यदि नहीं, तो क्यों? इसी तरह हम यह भी देखते हैं कि स्वर की कितनी भंगिमाएँ यहाँ हैं, नाटकीयता है या नहीं। बोलने की कितनी विधियों, बातचीत के कितने स्तरों का उपयोग हुआ है। नागार्जुन की कविता पर विचार करते समय हमें विशेषकर व्यंग्य की चर्चा करनी होगी। नागार्जुन के रचना-विधान का एक अनिवार्य तत्व है व्यंग्य जो उन्हें मुक्तिबोध और शमशेर या अज्ञेय जैसे कवियों से भिन्न करता है। फिर, हमें काव्य-रूपों का अध्ययन करना होगा। आप तो जानते ही हैं कि आजकल कविताएँ प्रायः गद्य में लिखी जाती हैं। फिर भी प्रत्येक कविता, श्रेष्ठ कविता, दूसरी कविताओं से भिन्न होती है - केवल अपने कथ्य के कारण नहीं, बल्कि अपने गठन के कारण भी। यह भिन्नता कैसे प्रगट होती है। इसके अलावा, नागार्जुन जैसे कवि